अघोरपीठ बाबा कीनाराम स्थल, बी-3/335, क्रींकुण्ड, रविन्द्रपुरी, वाराणसी

गुरुवाणी

आप ओछी हरकत न करें
जिससे किसी को कष्ट हो।

–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।
R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015
वर्ष-१५, अंक २३, वाराणसी। मंगलवार १५ दिसम्बर २०१५ ई० सहयोग राशि ४.२५

मानसिकता

मानसिकता से हम मनुष्य के मन:स्थिति, अंत:करण जो वातावरण, स्थान, परिस्थिति और व्यक्तियों के प्रभाव से निर्मित होता है, का भाव लगाते हैं। जो लोग अपने को समुन्नत बनाना चाहते हैं अपने मनुष्य योनि को सफल करना चाहते हैं वे भरसक स्वयं को ऐसे वातावरण एवं संग-साथ में रखते हैं जिससे हर प्रकार से उनका व्यवहार उचित हो। अच्छे व्यक्तियों से सम्पर्क, सत्संग, चिन्तन-मनन आदि आदि कारक भी मानस पर प्रभाव डालते हैं एवं मनुष्य के मानसिकता का निर्माण करते हैं। कोई व्यक्ति किस स्तर का है, किस संस्कृति का पोषक है उसका समाज में क्या स्थान है, यह सब उस व्यक्ति के मानसिकता का ही प्रतिफल है। उसके हाव-भाव, चाल-ढाल आदि पर पूर्णत: उसके सोचने, समझने की स्थिति का प्रभाव प्रतिबिम्बित होता है। भले ही मनुष्य अल्प काल के लिए स्वांग कर लें, दिखावा करें, ढोंग करें परन्तु वास्तव में वे क्या है यह किसी से छिपा नहीं रहता। व्यक्ति की मानसिकता ठीक रहने से जीवन का व्यतिक्रम ठीक रहता है। हर मानव के जीवन में धूप-छांव, सुख-दु:ख, रात-दिन की तरह आते रहते हैं। यदि उसकी बुद्धि इच्छाशक्ति प्रबल है तो उन सभी बाधाओं को बड़े आसानी से शान्तिपूर्वक कुशलता से पार कर लेता है। किसी तरह का भूतप्रेत, रोग व्याधि, नींद की कमी व्यक्ति के मानसिकता के गड़बड़ाने से ही होना सिद्ध हुआ है। चंचल मन के दुराग्रहों के समक्ष नतमस्तक हो जाना विवेक के मना करने पर मन के वशीभूत होकर किसी भी अप्रिय या समाज विरोधी कार्य का जनक कमजोर मानसिकता का ही होता है। ऐसे मानसिकता का व्यक्ति जो सदैव अपने को प्रफुल्लित रखें, दूसरों पर कीचड़ उछालने से पहले अपना आत्मनिरीक्षण करें तो उस व्यक्ति के हाथ यश ही यश लगता है। विकारों में अपने अमूल्य जीवन का एक पल भी वह नहीं गवां पाता। ऐसे व्यक्ति जिज्ञासु, खोजी एवं संवेदनशील होते हैं। उन्हें अज्ञात रूप से सद्गुरु की आवश्यकता होने लगती है और यदि कई जन्मों के प्रभाव से उन्हें सद्गुरु का सानिध्य प्राप्त हो जाता है तथा जिनकी इच्छा गुरु के वचनों को आँख मूँदकर मान लेने की होती है, अनुपालन करने की होती है वह व्यक्ति शतप्रतिशत जीवन में सफल होता है तथा फलत: गुरु सद्कृपा का पात्र कहलाता है। जीवन में आने वाले बाधाओं को, विपदाओं को यदि हम ध्यान से देखें तथा गुरु के वचनों के अनुसार तद्नुसार आचरण करें तो न केवल ऐसी बाधाओं पर हम विजय प्राप्त करेंगे बल्कि हमारा मानस पटल भी कुप्रभावित होने से बचेगा। इसके लिये आवश्यक है कि हम स्वयं के प्रति ईमानदार रहे। दिखावा करने, स्वांग करने से निरन्तर बचते रहे। जिससे हमारे मन पर हमारा नियंत्रण बना रहे अन्यथा अहं, घमंड, दंभ, पाखंड हमारे जीवन में घुसकर ऐसे धीरे-धीरे क्षरण करता है जैसे कपड़े को कीड़ा। इन्द्रियों को मनचाहा भोग न देना तथा सदैव सद्मार्ग की ओर अपने को कसकर बांधे रहना सबल मानसिकता का लक्षण है। यद्यपि हम सब अवगत है कि अघोर पथ में किसी पंथ को त्याज्य अथवा घृणा की दृष्टि से नहीं देखा जाता। ठीक यही बात मनुष्यों पर भी लागू होती है। व्यक्ति चाहे जिस परिवेश, समाज, जाति-वर्ण, परिवार का हो, चाहे वह पूर्व में जितना भी निकृष्ट कार्य कर गुजरा हो यदि वह अघोर की शरण में आता है तो जिस प्रकार सागर में सभी नदियाँ मिलकर अपने अस्तित्व को विलीन कर देती है उसी प्रकार व्यक्ति में पूर्ण परिवर्तन आकस्मिक रूप से हो जाता है। जिससे वह समस्त प्राणियों को साथ लेकर चलने को आतुर होता है। उसमें सर्वोदय, अन्त्योदय एवं सर्वजन सुखाय, सर्वजन हिताय की भावना दिनोदिन घर करने लगती है। इसके विपरीत यदि व्यक्ति की मानसिकता ही डांवाडोल है तो वह निश्चित रूप से उसके व्यक्तित्व को निर्बल बनाती जाती हैं। परिश्रम किये जाने के उपरान्त भी जिन लोगों को अपेक्षित परिणाम की प्राप्ति नहीं होती। वे इसी श्रेणी में आबद्ध होते हैं।

अस्तु, अपने मानसिकता को ठीक करना प्रत्येक जागरूक व्यक्ति का पुनीत कर्त्तव्य है। प्रसिद्ध विद्वान बेकन का कथन है कि- ''मनुष्य का जीवन कोरे कागज के समान है, वह जिन परिस्थितियों में रहता है। जिन विचारों से प्रभावित होता है उसी सांचे में ढल जाता है।'' जैन धर्म में अहिंसा परमो धर्म: बताया गया है। जबकि मुस्लिम भाईयों में पशु वध को अल्लाह का कार्य माना जाता है। यद्यपि, यह दोनों एक दूसरे के विपरीत है, भिन्न है। परन्तु, अलग-अलग पंथों के विश्वासी उसे अपनी-अपनी दृष्टि से सही मानते हैं। हिन्दुओं में वेद, पुराण, शास्त्र आदि को प्रमाणित ग्रन्थ माना जाता है। जबकि क्रिश्चियन बाइबिल को तथा मुसलमान कुरान को मानते हैं। यद्यपि, इन ग्रन्थों में विपरीत तथ्य अंकित है फिर भी मनुष्य का विश्वास, उसके जीवन की स्थिति, परिस्थिति उसे वह करने को सही बताती है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसीलिये रामचरित मानस में उद्धृत किया है- ''जाकि रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी। कहने का तात्पर्य है कि मनुष्य अपने भावना के अनुरूप उचित कार्य करने को तत्पर रहता है। हिन्दुओं में पूजा पाठ, जप-तप, ध्यान, उपासना आदि सब हमारी पद्धतियाँ समाज द्वारा निर्मित मानसिकता का ही द्योतक है। इसके विपरीत यदि मनुष्य की सोच किसी प्रकार शोक संतप्त है, अनिश्चितता से व्याप्त है तो अपने पूर्व बनाये गये मनोवृत्ति के अनुसार वह फूल की माला को सर्प समझ बैठता है। जिसका कालान्तर में उसे घोर अफसोस, पश्चाताप तब होता है जब वह इसकी सच्चाई को शान्त मन से समझ पाता है। चाहे हम शरीर गलावे, तपस्यारत रहे लेकिन जब तक अंत:करण यानी मानस पवित्र नहीं है मानसिकता ठीक नहीं है तो बहुत संभव है हमारी तपस्या व्यर्थ हो जाये। यद्यपि, जैसे मनुष्य प्रतिदिन अपने बाह्य शरीर को शौच आदि के उपरान्त स्नान करके शुद्ध कर लेता है उसी प्रकार प्रतिदिन अपने मानसिकता को भी परिमार्जित करते रहना होगा। इसमें आत्मनिरीक्षण का बड़ा प्रभाव होता है। यह भी एक तथ्य है कि हम अपनी त्रुटियों को स्वयं देखने में समर्थ नहीं है। परन्तु, अपने परिवार, समाज या राष्ट्र के व्यक्तियों के प्रति अपनी तद्नुसार भावना का इजहार करते रहते हैं। जबकि हमारा शरीर ही हमारे साथ है। हमारा मन, हमारा मस्तिष्क ही हमारे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। फिर भी वह अक्सर बिना लगाम के घोड़े की भांति इधर-उधर भटक जाता है। मनुष्य कभी-कभी स्थायी रूप से आजीवन एक दूसरे के प्रति पूर्व भावना से ग्रसित होकर एक छवि बना लेता है।

शेष पृष्ठ दो पर

सुख समृद्धि की चाह

वह कौन सा मनुष्य होगा जिसे सुख समृद्धि की चाह नहीं बनी रहती है। मनुष्य अपने भौतिक, आत्मिक सुख-शान्ति के लिए, समृद्धि एवं स्वस्थता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है। परन्तु इसे प्राप्त करने के मार्ग पर अध्यात्मिक दृष्टिकोण से नहीं सोचता। साधुता के मार्ग पर चलने को उत्कृष्ट पराक्रम कहा गया हैं। ऐसे व्यक्ति सबसे पहले अपनी शारीरिक एवं मानसिक योग्यताओं को स्वयं के पौरुष द्वारा बढ़ाते हैं। वे दीन हीन बनकर भीखमंगों की भांति मंदिर-मंदिर याचना नहीं करते फिरते। कहा गया है कि—

''खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तहरीर से पहले खुदा बन्दे से ये पूछे बता तेरी रजा क्या है।''

कहने का तात्पर्य है कि निराभिमानिता से युक्त एवं आलस्य रहित, आडम्बर हीन व्यक्ति वह सब कुछ पा लेता है जिसे वह चाहता है। रंगा सियार या सिंह की खाल ओढ़कर हम कदापि सिंह नहीं बन सकते। बल्कि समाज में धोखेबाज सिद्ध होकर अपने को अपमानित ही महसूस करेंगे। व्यापार में अधिक लाभ, नौकरी में अधिक सुविधा, सद्गुरु का आशीर्वाद, परिचितों से आदर, समाज में प्रतिष्ठा आदि को प्राप्त करने में हमें अपने को समर्पित करना पड़ता है। यही सच्चा आध्यात्मवाद है। कठिन परिश्रम करके जो सफलता प्राप्त होती है वह टिकाऊ आनन्ददायक व दूरगामी परिणामदायक होती है। जबकि आसानी से प्राप्त होने वाली इच्छित के विलुप्त होने में भी देर नहीं होती। कहने का आशय है कि मनुष्य अपनी इच्छाशक्ति, पौरुष, कुशलता के साथ अटूट धैर्य, निष्ठा एवं साहस का पुट देकर जो भी यथेष्ट चाहे प्राप्त कर लेता है। जबकि कायर, काहिल, कापुरुष व्यक्ति हर काम करने के लिए अपने भाग्य को दोष देकर देवी, देवता, संतों की ओर निरीह होकर ताकतें एवं लाटरी की भांति फल चाहते हैं। ऐसे कर्महीनों को इंगित करते हुए संत तुलसीदास जी द्वारा कहा गया है कि- ''सकल पदारथ एहि जगमाहीं, कर्महीन नर पावत नाहीं।'' इसी को ''वीर भोग्या वसुन्धरा'' से भी निरूपित किया गया है।

अस्तु, मनुष्य को उपरोक्त सुखों, वांछित अभीष्ट को प्राप्त करने के लिए अपने मन मंदिर में वह ज्योति जलानी चाहिए। जो बिना भटकाव के अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँचा दें। उतनी मात्रा में हमें परिश्रम, पुरुषार्थ करना ही पड़ेगा, जैसा हम चाहते हैं अन्यथा धोखे में पड़े पड़े मन ही मन ख्याली पुलाव पकाते रहने से अपने जीवन के अमूल्य क्षणों को हम जान बूझकर विनष्ट ही करते रहेंगे। यद्यपि हमारी आपकी चाह उतनी कठिन नहीं है जितनी दुरूह प्रारम्भ करने के पूर्व समझ में आती है। इसके लिए आवश्यक है कि आप तदनुसार अपने इच्छाशक्ति को जाग्रत करें एवं निर्बलता को दूर-दूर तक फटकने न दें। अन्यथा जो व्यक्ति मानसिक अथवा शारीरिक रूप से निर्बल होते हैं उन्हें नाना प्रकार से सुखों से वंचित रहना पड़ता है। जो आर्थिक दृष्टि से अक्षम है उन्हें जीवनोपयोगी न्यूनतम वस्तुओं को भी जुटाने में सफलता प्राप्त नहीं होती। इन समस्त दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त करने का एकमात्र जंत्र अपने पुरुषार्थ को बढ़ाकर तदनुसार आचरण करने में ही सन्निहित है।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ 0542-2277155.
e-mail–kinaram@rediffmail.com
www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

मानसिकता

जिससे उस व्यक्ति के प्रति ईर्ष्या, द्वेष का निर्माण होता है। परन्तु, यदि हम सरोवर में तैरते हुए दो बत्तखों की लड़ाई पर ध्यान दें तो क्षण भर के बाद वे अविरल रूप से पुन: अपने-अपने अंदाज में तैरने लगते हैं। एक दूसरे के प्रति जरा भी कोई दुर्भाव संचित नहीं रहता है। ठीक यही स्थिति मनुष्यों को भी एक दूसरे के प्रति अपनाना चाहिये तथा स्थायी द्वेष, वैर भाव को तिरोहित करना ही श्रेयस्कर है। इसका अन्य उपाय यह भी है कि मनुष्य अपने को यथासम्भव सदपुरुषों की शरण में रखें। इस हेतु उपाय सोचता रहें।

एक साधारण पुरुष जब महात्माओं के बीच में पहुँच जाता है तब वह क्रमश: शुद्ध होने लगता है। उसका वातावरण बदल जाता है। मनुष्य अपनी परिस्थितियों से प्रभावित रहता हैं यदि वह छली, कपटी और धूर्त लोगों के बीच में पड़ गया है तो वह प्रत्येक व्यक्ति को सन्देह भरी दृष्टि से देखने वाला बन जायेगा। उसे सब लोग कपटी और स्वार्थी प्रतीत होंगे और वह किसी के साथ स्वतंत्रता पूर्वक व्यवहार न कर सकेगा। किन्तु यदि वही व्यक्ति महात्मा पुरुषों के बीच में रहने लगे तो उनके त्याग पूर्ण व्यवहारों से उसे यह अनुभव होगा कि मनुष्य का स्वभाव दिव्य है। उसे उनके साथ किसी तरह का संदेह न होगा एवं वह सबके साथ खुलकर व्यवहार करेगा। इस तरह का वातावरण जीवन के लिए एक विडम्बना है और हम देखते हैं कि मनुष्य जिस तरह के लोगों के बीच में रहता है उसकी धारणाऐं तद्नुकूल हो जाती हैं और उसके व्यवहार में हम पता लगा सकते हैं कि वह किस प्रकार के वातावरण में पला है।

यदि कोई व्यक्ति ऐसे वातावरण में पहुँच जावे जहाँ लोग उसे मूर्ख, अस्पृश्य और घृणास्पद समझने लगें तो उसके चित्त में आत्महीनता की ग्रन्थि का निर्माण होने लगेगा और उसकी शक्तियाँ कुंठित होने लगेंगी। वह अपना आत्मविश्वास, आत्मगौरव और निर्भीकता खो बैठेगा और दु:खी बन जावेगा, भारतवर्ष के अछूतों का यही हाल हुआ है। उन्हें जन्म जन्मान्तर से बुरे संकेत दिए गए हैं, जिन्हें हम पुनर्जन्म के सिद्धान्त की आड़ में उचित और पाप-परिक्षालक कहते रहे हैं। इन संकेतों ने ही उन्हें दास स्वभाव वाला बनाया है। ऐसा वातावरण सचमुच जीवन के लिए एक अभिशाप है। उक्त प्रकार की ही सामाजिक बुराईयों, विक्षेपों को समाज से दूर करने के लिए अघोर की शरण एकमात्र स्थायी समाधान है। इस सागर में भवसागर के पीड़ित सभी प्रकार के प्राणियों के उद्धार का आश्रयस्थल है। ''सर्वेश्वरी त्वं पाहिमाम् शरणागतं'' के उच्चारण से एवं तद्नुकूल मानसिकता धारण करने से मानव अपने कर्मों को भली प्रकार सम्पादित करने लगता है। व्यक्ति के अन्दर शुभ-अशुभ, हानि-लाभ, हार-जीत इत्यादि में नकारात्मक डर कत्तई पैदा नहीं होता। उसे सर्वत्र शान्ति का अनुभव होता है एवं तृप्ति की अनुभूति होती है क्योंकि ऐसे व्यक्ति की पतवार अज्ञातमयी माँ सर्वेश्वरी के हाथों होती है। जबकि कुछ अपवादस्वरूप ऐसे मनुष्य होते हैं जो अपने स्वभाव, संग-दोष से दूसरे को भी संक्रामक बीमारी की तरह अछूते नहीं छोड़ते। उक्त प्रसंग के संदर्भ में संत तुलसीदास जी ने कहा है कि- ''बरू भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जन देहु विधाता।।'' शान्तचित्त, एकाग्रचित्त को धारण करना वाला व्यक्ति के प्रभामण्डल से ऐसी आभा निकलती है जिससे दूसरों का चित्त भी स्वस्थ एवं निर्मल बनता है।

मानसिकता के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए परमपूज्य अवधूत भगवान राम जी के द्वारा रचित ''अघोर वचन शास्त्र'' में अध्यायों के मध्य मानसिकता के अध्याय को भी स्थान दिया गया है। व्यक्ति का चित्त जैसे शव यात्रा के अन्तर्गत तिरोहित रहता है। उसी प्रकार उसे निरन्तर अपने चित्त को शान्त एवं निर्विकार बनाने का प्रयास करना चाहिए। उसे किसी व्यक्ति के द्वारा अपमानित होने पर साधारण व्यक्तियों की तरह प्रतिकार करते हुए नहीं पाया जाता। वह जाति, कुल, धर्म से भी परे मानवता के मूल्यों का पोषक साधु-फक्कड़ की संज्ञा से निरूपित किया जाता है। प्रत्येक मनुष्य को यह कामना करनी चाहिये कि अघोरेश्वर हमें सुख-शान्ति, समृद्धि दें और इन सबके मूल में हमारी मानसिकता का ही अहम स्थान है। अशान्त चित्त, कटुता घृणा का भाव आने का अर्थ है हमारी विकृति मानसिकता। यदि हम सम्राट की भांति निर्भय, सुखी सम्पन्न जीवन चाहते हैं तो अपने इन्द्रियों पर हमारा नियंत्रण प्रभावी होना चाहिये। हमें दूसरे व्यक्तियों का विश्वासभाजन होना चाहिये। यहाँ तक कि अपने परिवार एवं कुटुम्ब जनों के मन में हमारे प्रति क्या सोच उपज रही है उस पर ध्यान रखा जाना चाहिये। कहने का तात्पर्य है कि मनुष्य को अपनी विश्वसनीयता स्वयं कायम करनी होती है। धैर्य धारण करने वाला, साहसिक मानसिकता का व्यक्ति ही समाज में समादर से देखा जाता है। परिस्थितिवश यदि कुछेक घटनाएं अचानक प्रकट भी हो जाती है तो हम हृदय से

शेष पृष्ठ तीन पर

मानसिकता

द्वितीय पृष्ठ का शेष

प्रार्थना करें तो तत्काल इसका निराकरण हमारे मानसिकता में ही उपज जाता है। जिससे ऐसे विघटन से, विचलन से हम बच जाते हैं। अत: अपने इष्ट का ध्यान हर परिस्थिति में सत्कर्मों की तरफ बढ़ने में प्रेरित करता है। यदि स्वयं हम सतत अपने पर ध्यान रखें तो वह कल्प वृक्ष जो हर प्रकार की हमारी इच्छाओं को पूरा करता है वह स्वयं ही हमारी मानसिकता में छिपा हुआ है। कहा जाता है कि व्यक्ति जैसा बोता है वैसा ही काटता है इसी संदर्भ में संत कबीर की वाणी है कि "करता था सो क्यों किया अब करि क्यों पछताय। बोया पेड़ बबूल का, आम से खाय।।" अत: एकमात्र समाधान यही है कि अघोरेश्वर की वाणी "जबसे सूझे तबसे बूझे" को हृदयांगम करते हुए हम मनचाहे स्थिति को प्राप्त करने के लिए अपने मनोभूमि में ऐसे विचार विश्वास एवं संस्कारों को उगायें। जो निश्चित रूप से फल फूल कर हमें मालोमाल कर देगा। ऐसी ही मानसिक बागवानी का नाम संस्कारिक भाषा में ब्रह्मविद्या कहा गया है। इस विद्या के स्वामी को प्रफुल्लित आनन्दमय जीवन प्राप्त होता है। वर्तमान में तो हमारे राष्ट्र को ऐसी ही मानसिकता की आवश्यकता है। राष्ट्र के अन्दर पनपने वाले विनाशकारी आतंकी घटनाओं को अंजाम देने वाले व्यक्तियों के मानसिकता के भयावहता का अंजाम हम आये दिन अपने देश में तथा विश्व के अन्य भागों में घटती हुई घटनाओं को सुन समझ सकते हैं। हमारा यह सौभाग्य है कि भारत भूमि सदैव से सच्चे सद्गुरु, ऋषि, महर्षियों से पवित्र बनी रहती है। जिसके सम्पर्क में व्यक्ति आकर चमत्कारिक रूप से अपनी महानता को प्रकट कर असीम आनन्द की प्राप्ति कर लेते हैं। अघोरेश्वर की कृपा से यदि व्यक्ति के मस्तिष्क में सत्यवादी होने का भाव जग जाय, अपने इन्द्रियों पर नियंत्रण करने की शक्ति प्राप्त हो, उसकी रूचि परोपकारिता के प्रति बढ़ती चली जाये, सदाचारिता में उसका मानस आनन्दित हो उठे, अधिक वाचाल न होकर वह संयम से अपनी वाणी का प्रयोग करें तो बड़े ही सरलता से वह सत्पथ का पथिक बन सकता है। मार्ग में विचलन की स्थिति आने पर भी ऐसे मनुष्य बड़े ही सावधानी से अपने पैर को भी संभाले रखते हैं जबकि अल्पज्ञता की स्थिति में संस्कारहीनता की स्थिति में मानस पटल निर्बल होकर बुरी तरह प्रभावित हो जाता है। अधिकतर मनुष्य डांवाडोल स्थिति आने पर अपने भाग्य प्रारब्ध को दोष देते हुए ईश्वर को भी कोसने लगते हैं। जबकि सबका कारण स्वयं मनुष्य ही होता है। यह अलग तथ्य है कि व्यक्ति इसे समझ नहीं पाता तथा समाज के द्वारा भी प्रथा के रूप में कुछ सामाजिक बुराईयों ने समाज को अपना ग्रास बना लिया है। जैसे विधवापन, नशापान, दहेज, गरीबी, भूखमरी, बीमारी, वेश्यावृत्ति से आज भी हमारा समाज आक्रान्त है। इन सभी समस्याओं का निराकरण व्यक्ति को शिक्षित कर उनकी बुद्धि में परिवर्तन कर, उनकी मानसिकता को सबल बनाने में छिपा हुआ है।

ऐसे विष बेलों को समाप्त करने हेतु महापुरुषों का चरित्र चिन्तन भी कल्याणकारी होता है। उनकी वाणियों, उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यक्रमों के प्रति अपने को समर्पित करने से भी व्यक्ति पावन बन जाता है। जैसे श्रीराम की सेना में भर्ती हुए रीक्ष, वानर भी पवित्र हो गये थे। द्वापर में भगवान श्रीकृष्ण के सानिध्य में गंवई गंवार समझने जाने वाले गोप-गोपियाँ भी बुद्धिमान शिरोमणि बनकर उद्धव से संवाद करने लगे थे। अत: आत्मसंस्कार के लिये सत्संग के साथ ही संत का सानिध्य रामबाण औषध के रूप में कार्य करता है। बड़े-बड़े दुष्ट, पापी, घोर दुराचारी भी सज्जनों के सम्पर्क में आकर अपना कल्याण कर आत्मशुद्धि कर लेते हैं। इसके साथ ही स्वाध्याय भी मानसिकता को पूर्ण रूप से बदलने का सरल सुसाध्य मार्ग है। स्वाध्याय एवं सत्संग से न केवल हम अपने मस्तिष्क, बुद्धि को ठीक करते हैं बल्कि अपने जीवन में की गयी त्रुटियों का परिमार्जन कर लेते हैं। जितने संत महापुरुषों ने हमारे समाज का कल्याण किया है, वह सर्वविदित है। शास्त्रकारों का कथन है कि-

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षते जनश्चरितमात्मनः।
किन्नु मे पशुभिस्तुल्यं किन्नु सत्पुरुषैरिव।।

यानी प्रति घड़ी प्रत्येक मनुष्य को अपने स्वयं के चरित्र का निरीक्षण करते रहना चाहिए कि उसका चरित्र पशुओं जैसा है अथवा सत्पुरुष जैसा। आत्म निरीक्षण की इस प्रणाली का नाम ही स्वाध्याय है। जितने महापुरुष हुए हैं वे सब इसी मार्ग का अनुसरण करते रहे। उन्होंने स्वाध्याय के इस मार्ग में कहीं भी अपने अन्दर कमी नहीं आने दी बल्कि समस्त कमियों को निकालने और पूर्ण मानव बनने के उद्देश्य से इस मार्ग को ग्रहण किया। साधु-संगत, सानिध्य एवं सत्संग से विवेक जाग्रत होता है और मनुष्य भले बुरे का निर्णय कर सकने में समर्थ होता है। यद्यपि, घटनाओं का प्रभाव हमारे मानसिकता पर अवश्यमेव पड़ता है। परन्तु, यदि इन घटनाओं की वास्तविकता को हम नहीं समझ सकते। उनके भले, बुरे प्रभावों को पृथक करने का सामर्थ्य नहीं रखते तो अवश्य ही उसके हाथ खिलौना बनने और तरंगों में बहने को हम बाध्य हो जाते हैं जो हमारे लिये हितकर सिद्ध नहीं हो सकता। हमारा मनुष्यत्व इसी में है कि हम सुख-दु:ख में अपने मानसिक संतुलन स्थिर रखें। आसक्ति के भाव यथासंभव कम रखें। समस्त मानवों के प्रति हमारा विचार उदार बना रहें क्योंकि भारत के प्राचीन कथाओं से प्रकट होता है कि यहाँ के बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि जन्मजात छोटे कुल के थे। परन्तु साधु संगत के प्रभाव से वे जगत् पूज्य बनें और आज भी उनका नाम बड़े श्रद्धा, विश्वास से लिया जाता है। आदिकवि वाल्मीकि जी बहेलिया, नारद जी दासी पुत्र, अगस्त्य ऋषि घड़े से उत्पन्न, सत्यकाम एवं वशिष्ठ जी वेश्यापुत्र माने गये हैं। परन्तु, आत्म परायण संत पुरुषों की संगत से उन्होंने अपने मानसिकता में उत्कृष्ट वृद्धि की और ऊँचे पदवी पर जा पहुँचें। अस्तु, आज भी उक्त दृष्टान्त सामयिक होते हुए सार्थकता का भाव संजोये हुए है और ऐसे मनुष्यों के लिए सुअवसर प्राप्त कराता है। जिसे अपने जीवन को सार्थक करने की चाह बनी हुई है। क्योंकि महात्माओं की वाणी, गुरुवचन का अनुपालन न केवल हमारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व को संवारता है बल्कि इस कंटकाकीर्ण अथाह भवसागर को पार करने की शक्ति भी प्राप्त कराता है। वर्तमान समय में हमारे समाज में, राष्ट्र में स्वार्थ, आपाधापी, आतंकवाद, धूर्तता की जो आंधी उठी हुई है उसमें ऐसे ही व्यक्तियों का जीवन निश्चल हो सकता है जो श्रेष्ठ मानसिकता को धारण करें एवं स्वार्थी, धूर्त प्रकृति के व्यक्तियों के मानसिक स्थिति को भांप लें। यथासम्भव भरसक प्रयत्न कर ऐसे लोगों को भी बुरे मार्गों से सचते करते हुए उन्हें सन्मार्ग पर चलने को प्रेरित करें और विशेषकर अपने सन्तति को भी सुखी जीवन व्यतीत करने के लिए नीच वृत्ति वाले लोगों के साथ से सर्वथा वंचित करते रहें। दुर्भाग्य है कि कुछ उच्चकोटि के पढ़े लिखे समझदार व्यक्ति भी आजकल आतंकवाद, लूट अपहरण, डकैती, सरीखे कार्यों में संलग्न पाये जाते हैं। इस महाविनाश का एकमात्र कारण उनके मानसिकता में उचित समझ का अभाव ही है। दुर्भाग्य से ऐसे व्यक्तियों को आरम्भ से ही उचित संस्कार, शिक्षा-दीक्षा का अभाव बना रहा तथा उन्हें सचेत नहीं किया गया कि उनका ज्ञान तभी तक कल्याणकारी है जब तब कि वे सुमार्ग पर अग्रसर होते रहें। यदि इन शक्तियों का दुरुपयोग किया गया जैसा कि आज देखने में आ भी रहा है तो नि:संदेह यह व्यक्तियों के जीवन में उथल-पुथल उच्चश्रृंखलता के साथ ही दुर्गुणों की वृद्धि कर उन्हें चरित्रहीनता के दलदल में ढकेल देता है।

इस प्रकार हमारे प्रत्येक पढ़े लिखे राष्ट्रवासियों का कर्त्तव्य है कि वे शिक्षा का प्रचार-प्रसार, संस्कार जन्य तरीके से करें तथा बालक-बालिकाओं के व्यक्तित्व को संवारने, उसे दु:शीलता से बचाने पर अपना व्यक्तिगत ध्यान दें अन्यथा वे समाज के शत्रुओं को अनजाने में ही बढ़ाते रहेंगे। जिससे उनके स्वयं का जीवन असह्य एवं दुभर हो जायेगा।

परम पूज्य अघोरेश्वर महाप्रभु जी का 24वाँ महानिर्वाण दिवस

अघोर पीठ बाबा कीनाराम स्थल क्रींकुण्ड में परम पूज्य अघोरेश्वर महाप्रभुजी का 24वाँ महानिर्वाण दिवस 29 नवम्बर को हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। प्रात: स्थलवासियों द्वारा साफ-सफाई का कार्य हुआ। तत्पश्चात् महाप्रभु के समाधि को फूल-मालाओं से सजाया गया तथा विशेष आरती पूजा की गयी।

इस अवसर पर हजारों श्रद्धालुओं ने समाधि पर शीश नवाया व प्रसाद ग्रहण किया। रात्रि दस बजे तक श्रद्धालु भक्तजनों के आने जाने का क्रम लगा रहा।

अन्य सभी शाखा आश्रम उ0प्र0 में कार्यरत विभिन्न शाखाओं यथा लालगंज (आजमगढ़), जौनपुर, गाजीपुर, बलिया, बलरामपुर, बसखारी (अम्बेडकर नगर), रायबरेली, गोरखपुर, फैजाबाद, महाराजगंज, कुशीनगर, रेनुकूट (सोनभद्र), बिहार प्रान्त में भोजपुर, गुंडी, मोहनियाँ, सासाराम, अहिनौरा, औरंगाबाद, पटना आदि में भी भक्तों द्वारा गोष्ठी की गयी एवं महाप्रभु के विचारों पर चलने का संकल्प लिया गया। झारखण्ड में अवस्थित शाखायों राँची, धनबाद, बोकारो, जमशेदपुर, गुमला, सिमडेगा, डाल्टेनगंज, नगर उटारी, गढ़वा, जपला आदि, मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ की सभी शाखाओं में जैसे विलासपुर, कुड़मकेला, रायगढ़ के साथ ही मुम्बई, गोवा एवं दिल्ली में भी श्रद्धापूर्वक महानिर्वाण दिवस मनाये जाने का समाचार प्राप्त हुआ है।

आप अपने को धोखा न दें, अपने पर दया करें

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्म बन्धुओं!

जिन महापुरुषों की छत्रछाया में आज यहाँ हम चिन्तन कर रहे हैं उनकी एक कुबड़ी थी जिसको ठोंकने से जूनागढ़ के नवाब के जेल की चक्कियाँ चलने लगीं। उन महात्मा के पास चटाई, कमण्डल और कुबड़ी के सिवाय कुछ नहीं था। ऐसे व्यक्ति क्रूरता और अत्याचार के विरुद्ध विद्रोह नहीं करेंगे तो कौन करेगा? जो धन, सामान बटोरने में लगे हैं वे ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि उन्हें अपना धन छिन जाने का भय बना रहता है।

दुसह-कर्म, लूट-खसोट, हिंसा-अपराध के कर्म जो हम करते हैं, उन कृत्यों को ईश्वर आकाश और वायु के सदृश्य देखते हैं। इसलिए सज्जन, श्रद्धालु, भक्तजन इनसे सदा दूर रहने और इनसे बचने का प्रयत्न करते हैं। नशीले पदार्थों का सेवन, जिससे मनुष्य का मस्तिष्क विकृत होता है, ऐसे अपराध कर्मों में ही आता है जिसे कुछ लोग पूज्य बाबा कीनाराम और उनकी परम्परा के शिष्यों की दिनचर्या से जोड़ते हैं। पूज्य बाबा ने कहा कि ''उस परम्परा को कोई सच्चा साधक, सन्त आज के देश-काल की परिस्थितियों में ऐसी त्याज्य वस्तुओं का सेवन नहीं करेगा और जो लोग इन वस्तुओं का सेवन कर रहे हैं वे किसी भी प्रकार से इस परम्परा से सम्बन्धित नहीं हो सकते हैं।

सच्चे भाव से जो हम इन महापुरुषों की छत्रछाया में संकल्प लेते हैं, वह अवश्य पूरा होता है, मगर दुर्बल मनुष्य संकल्प नहीं करता है। वह इच्छा करता है। सच्चे साधक संकल्प करते हैं कि उन महापुरुषों के आचरण को अपनायेंगे और किसी भी परिस्थिति में उससे विमुख नहीं होंगे। मगर जो वामांगना, नितम्बना के उपासक हैं वह ललिता के उपासक नहीं हो सकते। ललिता कोई दीगर वस्तु नहीं होती बल्कि जो उपासक हैं उनकी वाणी इतनी ललित होती है जिससे दूसरे सहज ही पिघल जाते हैं। कर्कश वाणी का वे प्रयोग नहीं करते। जो वागेश्वरी के उपासक हैं, उनकी वाणी से नहीं निकलता है कि हम ऐसा करें, वैसा करें। उनका चुप रहना ही, कुंठित रहना ही बहुत बड़ा अंकुर होता है। जो दिन रात यह सोचते रहते हैं कि कैसा खान पान रखें, कैसा पहनावा रखें कि दूसरों को प्रभावित कर सकें, वे कब तक समाज को धोखा देते रहेंगे?

आज मनुष्य राम कृष्ण, शिव, साधु और महात्माओं का ध्यान तो करते हैं किन्तु क्या वे कभी अपना भी ध्यान करते हैं? मनुष्य जब तक स्वयं अपने प्रति दया नहीं करेगा अपने को गंदगी में गिरने से रोकने का प्रयास नहीं करेगा तब तक उसकी सभी पूजा अर्चना निरर्थक है।

यहाँ जो हम योगेश्वर की महास्थली में, उनकी समाधि के पास बैठकर जो चिन्तन कर रहे हैं और जो कुछ कर्म किये हैं वह निरर्थक नहीं जायेगा। हम चक्षु, श्रवण और वाणी दोष तथा एक दूसरे से टकराने से बचें तो इसका बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। नहीं तो जो उपासक वाणी के माध्यम से कुछ चाहता है तो उसे संकल्प नहीं कहते। जो संकल्प करता है पूर्ण रूप से संकल्प करता है, इच्छा नहीं करता है। शैतान भी इंसान की शक्ल में होता है किन्तु उसकी पहचान उसके कृत्यों से होती है। बुरी आदतों की दवा केवल मौत होती है। हमारे जिन कार्यों से समाज को, नजदीकी लोगों को कष्ट होता है, उन कृत्यों को हमें छोड़ना चाहिए। मन, वचन, कर्म से हम अपने आपको धोखा न दें, अपने पर दया करें। यही कल्याण का मार्ग हो सकता है। आज जिस महापुरुष की छत्रछाया में हम यहाँ एकत्रित हुए हैं, वे हमारे राष्ट्र तथा समाज को अच्छी प्रेरणा दें ताकि किसी के प्रति हमसे ईर्ष्या, द्वेष व घृणा न रहे। सभी एक दूसरे से स्नेह करें। हमारे देश में जो नये-नये कुविचार फैल रहे हैं, उन्हें दूर करें, यही उनसे प्रार्थना है।

किसी का साथ उसका कुलशील अच्छी तरह जानकर ही करना चाहिए। यदि आप केवल कुल को ही जानते हैं, उसके आचरण को नहीं जानते हैं तो वह आपको ले जाकर कहीं फँसा सकता हैं जिससे अपने स्वास्थ्य, अर्थ की हानि होती है और समाज में पीछे, मुँह छिपाकर बैठना पड़ता है। इसके साथ ही इस बात पर भी गौर करना चाहिए कि यदि हमारे बाप, दादा चोरी करते रहे हैं तो क्या हम भी चोरी करें? हम और आप यदि कत्ल करते हैं तो जेल जाते हैं सजा पाते हैं, मगर एक सैनिक हजारों हजार शत्रुओं का कत्ल करता है तो देश और समाज उसका स्वागत करता है, उसे देवता सदृश मानता है।

वह करते थे हम करें ऐसा नहीं मान लेना चाहिए यदि ऐसा विचार और आचरण है तो किसी मन्दिर या पवित्र स्थल पर जाने का महत्व नहीं होता है। क्रिया एक ही है पर उसका प्रभाव भिन्न-भिन्न होता है। इसी तरह साधुताई की कोई खास विशेषता नहीं। मन, कर्म और वचन से न हम अपने को धोखा दें और न दूसरों को गलत प्रेरणा दें, तो ऐसा मनुष्य जब किसी महापुरुष की पवित्र-स्थली पर या सामाजिक पवित्र-स्थल या मन्दिर पर झुकता है तो उसका झुकना महान धनुष का कमान होता है। जिससे बाण का सधान कर वह समाज के दुःख, क्लेश को मिटा सकता है।

परमार्थ सबसे बड़ी पूजा

सन्त का हाल भगवान भी नहीं जानते। जिसे आप ईश्वर समझते हैं उससे सन्त की अवस्था कहीं अधिक बड़ी होती है। बड़े-बड़े राजे-महराजे नवाब आये जनता पर छाये, मिट गये और उनका कहीं नामोनिशान तक नहीं रहा, परन्तु सन्तों की वाणी अजर-अमर है। ये मिट्टी-मिट्टी में विराजमान है। इसी प्रकार ज्ञानेश्वर हैं। वे वर्ण व्यवस्था के कट्टर विरोधी थे। इसी कारण वे अपमानित होते रहे। वैसी पीड़ा हम आप एक मिनट भी नहीं सह सकेंगे।

केवल महात्माओं के कृत्रिम चिन्तन से पूजा नहीं हो सकती। उनकी आज्ञा शिरोधार्य होनी चाहिए। परोपकार ही पूजा है, धर्म है। परन्तु वह बनावटी या कृत्रिम नहीं होना चाहिए। इस क्रिया कलाप से शान्ति नहीं प्राप्त होगी। जब तक भीतर से तृप्ति नहीं होगी, तब तक शान्ति समाहित और तृप्ति नहीं होगी। तृप्ति से जो उदय होगा, उससे शान्ति प्राप्त होगी और मंगल होगा। गीता, रामायण में खोजें वह बात नहीं मिलेगी जो आपके अन्दर से प्राप्त होती है। अपने आचरण एवं महात्मा के अच्छे चिन्तन से अन्तःप्रेरणा होगी। परोपकार ऐसा करना चाहिए कि दायें हाथ से दें तो बायें हाथ को भी पता न चले। इससे एक नये तरह का सानिध्य प्राप्त कर सकते हैं। यही अवस्था महात्मा की है जिसका दाढ़ी माला से कोई सम्बन्ध नहीं है। मान लेते हैं कि ईश्वर मिले तो वह क्या कहेंगे। ईश्वर यही कह सकते हैं कि हमारे लोगों की सेवा करो। जो लोग महात्मा, सज्जनों एवं सन्तों के पथ पर चलने वाले हैं, जो अपने विचारों में नया चिन्तन करते हैं उनसे यही निवेदन है कि उपकार करें। जहाँ तक हो छुपा उपकार करें, क्योंकि सामान्यतः लोग उपकार को छुपाते रहते हैं, परन्तु कुछ उपकार को बाजा बजाकर जनाते रहते हैं।

मनुष्य का सबसे विशाल धन चरित्र होता है। मृत्यु शैय्या पर पड़े रावण के पास जब लक्ष्मण ज्ञान प्राप्त करने गये तब रावण ने कहा कि तुम्हारा भ्राता हमसे बड़ा नहीं है, उसमें बहुत कमी है। सिर्फ उसके चरित्र बल के प्रभाव से ही विजय श्री उसके चरणों में है। यदि आपके पास चरित्र बल रहा तो हर अवस्था में आप प्रसन्न रहेंगे। सब जगह भाव ही रहेगा।

सभी साधु महात्मा का चाहे जो भी पथ हो या धर्म हो, मत एक होता है। हमारा दायरा छोटा होता है। हमें संकुचित दायरा नहीं रखना चाहिए। मनुष्य का जीवन बहुत छोटा होता हैं जीवन में अनेक तूफान होते हैं। हमारे आपके पास बहुत कम समय है, इसमें महापुरुषों की बातों अनुसरण की आवश्यकता है। जीवन सफल तब होगा जब घृणित होने पर स्थिर रहें, प्रेरणा वैसी ही रखें। गरीब, दुःखी, दीन या अपाहिजों को सहायता दें। हम सही ढंग से दलित, शोषित एवं गिरे लोगों की मदद करें।

एकाग्रचित्त होकर ध्यान करें

बंधुओं!

हम लोग जिसकी पूजा कर, उपासना कर, ध्यान-धारणा कर जो भी कुछ शब्द द्वारा उसे कह डालते हैं, शायद वह, वही है या उससे भी कुछ और भिन्न है। उसे वाणियों द्वारा, शब्दों द्वारा कहा नहीं जा सकता, वह कुछ और ही है। मुझे ऐसा लगा कि मेरी वैखरी जो अभिव्यक्त कर रही थी, आपका मन, मस्तिष्क, हृदय और आप यदि ठीक मेरे सामने होंगे, मेरी बात आपकी समझ में आयेगी और नहीं तो मेरी वैखरी जहाँ से अभिव्यक्त कर रही थी, जहाँ बैठकर ये बातें मैं सुन रहा था, वह बात आपकी समझ में भी नहीं आयेगी क्योंकि बहुत दिनों के बाद अर्जुन ने कृष्ण से पूछा था कि आप युद्ध-स्थल में कुछ सुना रहे थे, कह रहे थे। कृष्ण ने कहा यह तो मुझे मालूम नहीं, आप कुछ कह रहे थे। क्या गीता का वह पाठ याद है? मुझे नहीं मालूम है, क्या कह रह था। अब मेरी मनोदशा वैसी नहीं है। अब मेरी मनःस्थिति भी वैसी नहीं है, जिस स्थिति में मैंने तुम्हें वह बात कही, मेरी वैखरी ने अभिव्यक्त किया और तुम्हारी मनोदशा भी उस समय ऐसी रही कि तुमने उसे श्रवण किया। अब मेरी नहीं है और तुम्हें भी याद नहीं है, तुम्हें भी नहीं होगा।

बन्धुओं! आपकी आराधना, पूजा या चिन्तन में वह वस्तु जो पूजी जाती है, आकर निकल जाती है चली जाती है, वह क्षण फिर नहीं मिलेगा। इसलिये उस क्षण को बहुत महत्व दें। इसी के साथ आपसे विदा लेता हूँ और आपमें बैठी हुई देवी को प्रणाम करता हूँ।

अघोर सूत्र

☞ **हम सब साधुओं को चाहिये, औघड़ों को चाहिये कि हम अशोभनीय अपशब्दों को, गालियों को स्थान न दें। जो जिसका है, उसी का होकर रहेगा।**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी